कहानी

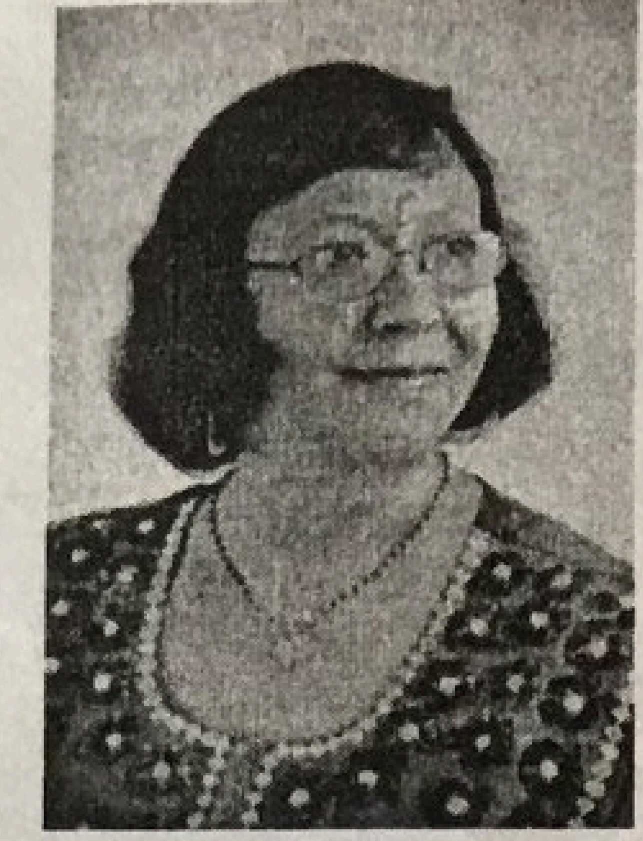

सुधा ओम ढींगरा

क्यों ब्याही परदेस

प्रिय माँ,

इस देश में आए अभी मुझे कुछ महीने ही हुए हैं, समझ नहीं आ रहा, इस देश के बारे में आपको क्या लिखूँ। जो जाना है, उसे समझने में उलझी हुई हूँ। जो नहीं समझी उसे जानने की कोशिश कर रही हूँ। खान-पान और रहन-सहन में पूर्व तथा पश्चिम का अंतर यहाँ पूरी तरह नज़र आ रहा है। उसे जानकर उससे तालमेल करने की कोशिश कर रही हूँ और आप लोग बार-बार पत्र लिख कर ज़ोर डालते हैं कि मै इस देश की खूब सारी बातें लिखूँ।

बेटी ब्याह दी परदेस, और आप लोग तो खुश हो लिए, कहाँ ब्याह कर जा रही है, उस देश के बारे में जानना भी आवश्यक नहीं समझा। अब जानकर क्या करेंगे...खैर मैं बताऊँगी ज़रूर... कुछ भी लिखने से पहले कुछ समय चाहती थी, पर आप सब लोगों की जिज्ञासा देखकर मैंने कलम उठा ली है।

कलम उठाने के बाद अब ऊहापोह है, सच बताऊँ या उस पर पर्दा डालकर लिखूँ। जानती हूँ कि सच लिखूँगी तो आपको बहुत कष्ट पहुँचेगा और सच पर पर्दा डालने का अभी हुनर नहीं आया। इस देश में तो सच बहुत सफाई से बोला जाता है, जिससे सामने वाले को सच सुनकर पैदा हुआ दर्द भी महसूस नहीं होता।

तर्क-वितर्क कर इस निर्णय पर पहुँची हूँ कि अपनी सच्ची भावनाओं को व्यक्त करूँगी, जिससे आप सब मेरे यहाँ के जीवन को जान सकें और मैं क्या महसूस करती हूँ, उन भावनाओं की गहराई तक पहुँच सकें।

जिस देश में आपने बेटी भेजी है, वहाँ घोर अँधेरे सा सन्नाटा है। अँधेरे को तो रोशनी की एक किरण भगा सकती है पर यह सन्नाटा तो जन्म-जन्मान्तर का है, वातावरण और बदन में समाया, पीढ़ी दर पीढ़ी पसरता। पक्षी तक नहीं चहचहाते। काश! वे ही यहाँ की नीरवता को तोड़ते। खूब बर्फ गिरी हुई है। ठण्ड से ठिठुरते वे भी किसी वृक्ष की खोह में दुबके बैठे होंगे। उनकी आवाज़ भी मेरी तरह ठंड से सीली हो चुकी होगी। चारों ओर बर्फ सफ़ेद चादर ओढ़ कर मरघट सा सूनापन दे रही है। मैंने ऐसी बर्फ तो कुफ़री में भी नहीं देखी थी, जहाँ हर वर्ष बर्फ का गिरना देखते थे। बर्फ़बारी की वजह से मैं कार चलाना भी सीख पाई। घर में बंद होकर रह गई हूँ। सर्दी का मौसम समाप्त होने पर ही सीख सकती हूँ। यह सब पता होता तो इस देश में प्रवेश करते ही कार चलाना सीखने वाले स्कूल में चली जाती। माँ, कार तो यहाँ मनुष्य के पाँव हैं। इसके बिना गुज़ारा करना मुश्किल हो जाता है। दिनचर्या की छोटी-बड़ी सभी वस्तुएँ और ग्रोसरी तक कार में लाना पड़ता है। नुक्कड़ की दुकानें यहाँ नहीं हैं, जहाँ से भागकर, जाकर सुविधा की चीज़ें लाई जा सकती हैं। छोटे शहरों में तो नुक्कड़ की दुकानों की और भी सुविधा होती है, पर मेरे छोटे शहर में ऐसा कुछ नहीं, कार पर जाकर ही चाय बनाने के लिये दूध लाना पड़ता है।

माँ, इस सच को शायद आप सहन न कर सकें। पर बताना तो पड़ेगा... आप ही तो सब कुछ जानना चाहती हैं... मुझे ठंड लग गई थी और बुखार 101 हो गया था। व्योम छुट्टी नहीं ले सकते थे। साल में सिर्फ़ दस दिन की छुट्टी ही व्योम की कम्पनी की पॉलिसी है और व्योम उन छुट्टियों को शादी में खर्च कर चुके हैं। मैंने बुखार में उठकर अपने लिये चाय और खाना बनाया। मेरे हाथ काँप रहे थे पर मेरे पास कोई विकल्प नहीं था। नौकर-चाकर यहाँ होते नहीं और पड़ोसी कोई घर पर नहीं था। शादी के उपहार में मिली रेसिपी बुक देख-देखकर मैंने कई व्यंजन बनाने सीख लिये हैं और दादी जी से कहना, जिस गुड़िया को उन्होंने कभी रसोई में जाने नहीं दिया था। यह कहकर वे रोक लेती थी, गुड़िया के मुलायम, प्यारे-प्यारे हाथ सख्त हो जाएँगे। अब सारा-सारा दिन वे हाथ बर्तन धोते हैं, कपड़े प्रेस करते हैं। कोई धोबी नहीं होता यहाँ और बर्तन साफ करने वाली मशीन जिसे डिश वॉशर कहते हैं, वह हल्दी वाले बर्तन नहीं धोती। स्थानीय लोगों के बर्तन साफ करने के लिये बनी हैं ये मशीनें, जिनके खाने में मसाले नहीं होते।

माँ, ये हाथ तो गुसलखाने के कमोड तक साफ करते हैं। हैरान क्यों हो गए। बताया तो है, यहाँ नौकरों की सुविधा नहीं है। यह है विदेश। इसे कहते हैं परदेस। भारत थोड़े ही है, जहाँ अमीर बेहद अमीर है और ग़रीब बेहद ग़रीब। मालिक और नौकर की परम्परा है। यहाँ सब एक समान हैं। कोई बड़ा, कोई छोटा नहीं। कम्पनी का अध्यक्ष और कम्पनी में काम करने वाले सब एक ही जगह,

ISSN 2320 - 7728

एक ही रेस्टोरेंट में खाना खाते हैं। सब अपना काम खुद करते हैं।

अब कैसे लिखूँ कि अपने घर की खिड़की से बाहर झांक कर सड़क पर और उसके आस-पास में मानवी आकृतियाँ ढूंढती हूँ। कोई मानुष चलता-फिरता नहीं दिखता। शाम को इक्का-दुक्का कारें घरों को लौटती नज़र आती हैं जैसे पंछी दिन भर की उडारी भर शाम को नीड़ों में लौटते हैं। माँ, वादा करो कि आप यह सब पढ़कर रोएँगी नहीं। वादा है न। तभी और सच लिख सकती हूँ। यहाँ का सच जाने बिना इस देश को समझा नहीं जा सकता।

और हाँ, सारे शहर न्यूयार्क या लॉसएंजेलस जैसे बड़े नहीं होते। ठीक वैसे ही जैसे स्वदेश में सब शहर सिर्फ मुम्बई या दिल्ली ही नहीं होते। यहाँ भी गाँव, कस्बे, छोटे-बड़े शहर हैं। मेरा शहर बहुत बड़ा नहीं। रहन-सहन छोटे शहरों जैसा है।

वहाँ देश में हमारा शहर भी तो छोटा है। पर लोगों में कितनी आत्मीयता है। बड़े शहरों की तुलना में सुविधाएँ तो सब हैं, हाँ चीज़ों के दाम कम हैं। यहाँ भी वैसा ही है। पर अभी लोगों से वास्ता नहीं पड़ा। उनकी आत्मीयता के दर्शन नहीं हुए।

माँ, अब यह मत सोचने लग जाना कि मैं अभी तक क्यों लोगों से मिली नहीं, क्या कारण है, सब ठीक तो है... वगैरह... वगैरह। मेरी प्यारी माँ, थोड़ा समय लगेगा, लोगों को जानने और समझने में।

यह भी तो समझिये, ससुराल तो भारत में छोड़ आई हूँ। परिवार के नाम पर बस हम पति-पत्नी हैं। ससुराल यहाँ होता तो उनकी जान-पहचान मेरी जान-पहचान बन जाती। खूब मिलना-जुलना होता। अब व्योम तो अपने काम के लोगों को ही जानते हैं। सभी कॉकेशियन हैं। मिल ली हूँ उन्हें। मेरे स्वागत में उन्होंने एक पार्टी रखी थी। कम समय में इतना अवश्य जान पायी हूँ, यहाँ के लोग भी हमारे जैसे ही हैं। बस रंग का अंतर है। हाँ, एक बात बहुत अच्छी लगी स्थानीय लोगों की, भावनाओं की अभिव्यक्ति में कंजूसी नहीं करते। खुलकर सामने वाले की तारीफ करते हैं। अपने देश में इसकी बहुत कमी पाई जाती है।

एक बात तो मुझे बहुत हैरान कर गई, देश में हम अपने परिवार, खानदान और दादा-पड़दादा से जाने जाते हैं, परदेस में हम भारतीयों की पहचान हमारा काम होता है। भारतीयता हमारी होंद है और भाषा हमारी अस्मिता। इस देश में आकर महसूस हुआ कि अपनी जातीय और प्रांतीय पहचान से परे मैं एक भारतीय हूँ। गर्व हुआ यह जानकर।

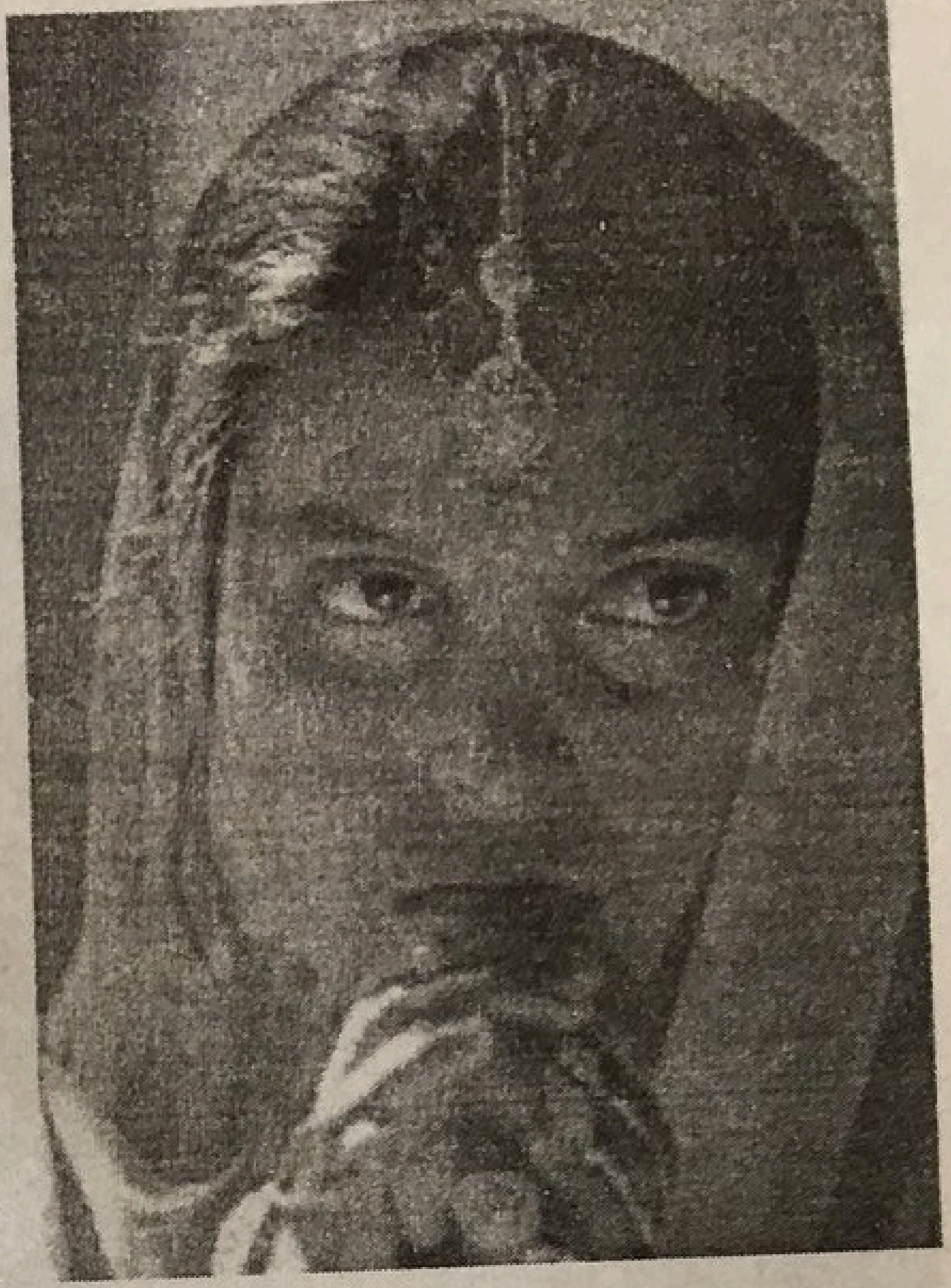

अब मेरा अकेलापन कुछ कम हो गया है। मुझे दो साथी मिल गए हैं। चौंक गए। वे साथी एक कुत्ता और एक बिल्ली हैं। दोनों सामने के अपार्टमेंटस में रहते हैं। ज्योंही मैं खिड़की के पास आती हूँ, वे भी अपनी-अपनी खिड़की के पास चले आते हैं और हम तीनों पहले शीशे की दीवारों से एक दूसरे का अभिवादन करते हैं, फिर बाहर देखते हैं, हम तीनों की आँखें गोल-गोल घूमती हैं, जैसे कोई खोजी कुछ ढूंढ रहा है। वे दोनों मेरे साथ ही मुंडी घुमा-घुमा कर बाहर की ओर देखते हैं। सिवाए वीरान सड़क के और हमें कुछ नहीं दिखता। संयुक्त परिवार की रौनक, घर के बाहर की चहल-पहल, बाज़ारों की धक्का-मुक्की और सड़कों की चिल्ल-पौं बहुत याद आती है। यहाँ तो कोई हार्न भी नहीं बजाता। हाँ कभी-कभी कानों में लाउडस्पीकर से गुरुद्वारा, मंदिर और मस्जिद की पवित्र आवाज़ें सुनाई देती हैं, आँख खुलती है तो स्वप्न होता है। हकीकत का सामना तो ध्वनियाँ रहित वातावरण से होता है। वहाँ अपने देश में प्रकृति का राग सुनाई देता था, भँवरे गूँजते थे और तितलियाँ रास रचाती थीं, यहाँ मैं कुछ भी नहीं सुन पाई हूँ।

खैर तन्हाई को भगाने के तरीके मैंने ढूंढ लिये हैं। माँ आप हमेशा कहा करती थीं- गुड़िया, खुशी हमारे भीतर है, वहाँ से तलाशो। बाहर कहीं से नहीं मिलने वाली। निकाल ली अपने भीतर की खुशी बाहर। रसोई का काम करते, बर्तन साफ करते, कपड़े धोते अपने-आप से बातें करती रहती हूँ, चुप रहना हमारे वश में नहीं।

दरवाज़े पर खटखटाहट हुई। पर दरवाज़ा नहीं खोलूँगी। जानती हूँ जेन है, उसकी कार आती देख ली है मैंने। साँस रोके बैठी रहूँगी। एक दो बार दरवाज़ा खटखटाएगी, फिर चली जाएगी। लो वह चली गई...

यह सुन कर बेचैन क्यों हो गयीं, धैर्य माँ, अभी बताती हूँ सारी कहानी। आपकी बेटी को इस देश में क्या-क्या और कैसे-कैसे अनुभव हुए हैं, आप सुनेंगी तो दांतों तले उँगली दबा लेंगी...

जेन हमारे अपार्टमेंट के ऊपर वाले हिस्से में रहती हैं और हमारे दरवाज़े के ठीक सामने से सीढ़ियाँ चढ़ती हैं। उदासी दूर करने के लिये कई बार मैं आपार्टमेंट के मुख्य दरवाज़े के बाहर खड़ी हो जाती थी। आते-जाते कई बार उससे हेलो-हाय हुई थी। उस दिन मैं बाहर खड़ी थी और वह ज्योंही सीढ़ियाँ चढ़ने लगी मुझे देख कर रुक गई और मुझे लगा कि वह मुझसे बातें करना चाहती है। मैंने उसे घर के अन्दर बुला लिया, सोचा कोई तो मिला बात करने के लिये। गोरे रंग पर उसकी बड़ी-बड़ी नीली आँखें अजीब सी लग रही थीं। ऐसी गहरी आँखें मैंने पहली बार देखी थीं। वह जब ड्राईंगरूम में आयी तो मैंने उसे चाय पीने के लिये कहा, क्योंकि मैं अपने लिये चाय बनाने वाली थी। उसने हाँ कह दी और मैंने चाय चूल्हे पर रख दी। उसे खुशबू बहुत अच्छी लगी, उसने भी चाय पी। चाय बनाने और पीने के दौरान उसने बताया कि हाई स्कूल करने के बाद उसने एक कम्पनी में सेक्रेटरी की नौकरी ले ली थी। उसके चार और भाई-बहन हैं। माँ-बाप बस दो वक्त की रोटी ही जुटा पाते हैं तथा उसने छोटी आयु में ही अपना खर्चा खुद संभाल लिया। अब नौकरी के साथ-साथ वह स्थानीय विश्वविद्यालय में अपनी पढ़ाई भी पूरी कर रही है। चाय पीने के बाद वह चली गई और जाते-जाते वह मुझे कह गई- 'इफ यू वान्ट गेट हाई,कम अप स्टेयरज़' मैं तो कुछ समझी नहीं। सोचा व्योम के साथ ही उसके घर जाऊँगी।

शाम ढले व्योम घर आए तो उन्हें सारा किस्सा बताया। उन्होंने एकदम से मुझे सावधान कर दिया कि जेन को दरवाज़ा मत खोलना, जेन ड्रग लेती है। तुम्हें भी इसीलिए बुलाया था उसने। उस दिन मैं बहुत डर गई थी। व्योम ने बड़े प्यार से सँभाला था और मुझे एक नम्बर दिया था कि अगर जेन बार-बार दरवाज़ा खटखटाए तो वहाँ कॉल कर देना। क्योंकि कई बार नशा करने के बाद नशेड़ी ऐसा करते हैं। सिक्युर्टी उसे वहाँ से हटा देगी, अगर वहाँ कोई फोन न उठाए तो 911 पर पुलिस को कॉल करना। यह सुन कर मेरा डर भाग गया था। जब व्योम को मैंने उसके बारे में बताया और कहा कितनी स्वाभिमानी और मेहनती है जेन तो वे हंस पड़े- 'जेन ने झूठ बोला है, वह कहीं सेक्रेटरी नहीं, एक ग्रोसरी स्टोर के काउण्टर पर काम करती है। ड्रग लेने वालों की बातों पर विश्वास नहीं करते। अक्सर वे झूठ बोलते हैं।' माँ, वह जैसे अपने परिवार की कहानी बता रही थी, मैंने उसे सच मान लिया था। इस अनुभव से मैं उदास हो गई थी। किस पर विश्वास करूँ और किस पर न करूँ। बातचीत करने के लिये भी तो कोई नहीं। उसी रात व्योम मुझे घर से बाहर ले गए। हमने जेन फोंडा और हेनरी फोंडा की पिक्चर 'द पोंड' देखी और बाहर 'हासियाँडा' मक्सिकन रेस्टोरेंट में खाना भी खाया था।

माँ, मेक्सिकन रेस्टोरेंट में जो खाना खाया, वह बिल्कुल हमारे खाने जैसा है, सिर्फ बनाने का तरीका अलग है। उनके राजमाँ पिसे हुए होते हैं और मकई की रोटी बहुत पतली होती है। पोदीना और हरी मिर्च की चटनी के साथ मकई के पापड़ होते हैं। है ना अजीब बात, धरती के दो अलग-अलग कोनों में बसे देशों का खाना एक-सा है, और माँ, मक्सिकन लोगों की शक्लें भी भारतीयों से मिलती-जुलती हैं। यह संयोग तो नहीं, ऐसे कैसे हो सकता है? इसी जिज्ञासा ने शोध करवाया। पता है आपकी बेटी क्या खोज लाई। मैक्सिको रावण के ससुर मैदावण का देश हुआ करता था। मन्दोदरी मैक्सिको की थी। वहाँ पर रावण, मैदावण और मन्दोदरी के अवशेष सुरक्षित हैं। शायद यही कारण है कि भोजन और नैन-नक्श आपस में मिलते हैं।

अक्सर सोचती हूँ लड़कियाँ विवाह के बाद नए माहौल में मेरी तरह ही जूझती होंगी। शायद नहीं, मेरी तरह नहीं। उनके संघर्ष और मेरे स्ट्रगल में बहुत भिन्नता है। उनका टकराव अपने देश में अपने लोगों में होता है। सिर्फ बाबुल का घर छोड़ कर वे ससुराल के घर में गई होती हैं। मेरे लिये तो विशेष अन्तर और होड़ दो देशों के परिवेश का है। दो संस्कृतियों के मूल्यों में सामंजस्य का, अजनबी देश और अजनबी लोगों में स्वयं की पहचान और अस्तित्व को बचाए रखने का प्रयत्न है। यहाँ हर मोर्चे पर तैनात नितांत अकेली खड़ी हूँ मैं और वहाँ ससुराल और मायके के परिवार के सदस्य और रिश्तेदार लड़की के साथ पग-पग पर होते हैं। अकेलेपन का भार मुझे यहाँ अकेले ढोना है ताउम्र, जब तक इस देश में हूँ, क्योंकि ब्याह दी गई हूँ परदेस में...

माँ, पत्र लम्बा हो गया और व्योम के आने का समय भी हो गया है। बाकी अगले पत्र में...

आपकी गुड़िया

Email – sudhadrishti@gmail.com

ISSN 2320 - 7728